

DAILY CURRENT AFFAIRS

IN HINDI

SPECIAL FOR UPSC & GPSC EXAMINATION

DATE : 17-12-25



The Hindu Important News Articles & Editorial For UPSC CSE

Wednesday, 17 Dec, 2025

Edition : International Table of Contents

Page 05 Syllabus : GS 2 : Social Justice / Prelims	उच्च शिक्षा विधेयक पर अधिकारियों ने कहा, नियामक से धन अलग करने का 'सोच-समझकर' फैसला
Page 05 Syllabus : Prelims	भारत-मालदीव संयुक्त सैन्य अभ्यास एकुवेरिन संपन्न
Page 07 Syllabus : GS 3 : Environment / Prelims	साँस लेने योग्य माइक्रोप्लास्टिक, एक छिपा हुआ विष जो हमारे शहरों में हवा को खराब कर रहा है
Page 10 Syllabus : GS 2 : Governance / Prelims	माओवादी के बाद के भारत में शासन का भविष्य
Page 12 Syllabus : GS 3 : Indian Economy	रुपया 91 के स्तर को पार करता है, 25 में सबसे कमजोर एशियाई मुद्रा बन गया
Page 08 : Editorial Analysis Syllabus : GS 2 : International Relations	ट्रम्प एनएसएस, यूरोप का अस्तित्व संकट अमेरिकी शक्ति को नया आकार देने वाली तीन क्रांतियाँ भारत और अमेरिका: 2005 बनाम 2025

विकसित भारत शिक्षा संस्थान (VBSA) विधेयक, 2025 की शुरूआत भारत के उच्च शिक्षा शासन में एक महत्वपूर्ण संरचनात्मक सुधार का प्रतीक है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC), AICTE और NCTE के स्थान पर एक शीर्ष निकाय का प्रस्ताव करके और नियामक, मान्यता, मानक-निर्धारण और वित्त पोषण कार्यों को अलग करके, विधेयक राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP), 2020 की प्रमुख सिफारिशों को लागू करने का प्रयास करता है। हालांकि, इसने स्वायत्तता, संघीय संतुलन और उच्च शिक्षा वित्त पोषण में राजनीतिक प्रभाव के बारे में चिंताओं को भी जन्म दिया है।

‘Conscious’ decision to separate funding from regulator, say officials on higher education Bill

Abhinav Lakshman
NEW DELHI

The Union government's decision to take away funding powers from the regulatory authority and create separate regulatory, accreditation, and standards councils for higher education institutions under the proposed Viksit Bharat Shiksha Adhishthan Bill, 2025, was a 'conscious' move in keeping with the National Education Policy, 2020 suggestion to minimise conflicts of interest, senior government officials said on Tuesday.

They said that this is why the Bill has segregated the three roles of regulation, accreditation, and standards-setting. However, the officials said the grant-disbursal function currently being exercised by the University Grants



The new Bill has segregated the roles of regulation, accreditation, and standards-setting in the higher education sector. FILE PHOTO

Commission (UGC) is proposed to be performed by the Ministry of Education.

Without providing details, Education Ministry officials said that under the proposed law, the mechanism that will be used to disburse grants to Central universities "will be similar to or better than the existing mechanisms". They added that institutional performance on regulatory com-

pliance will continue to be a "major factor" in deciding the quantum of funds to be distributed, but not the only one, citing the need for a "holistic view" while giving grants.

The VBSA Bill, introduced in the Lok Sabha on Monday amid objections from the Opposition, proposes an overhaul of India's higher education regulatory framework,

replacing the UGC, the All India Council for Technical Education (AICTE), and the National Council for Teacher Education (NCTE), with a single apex commission – the VBSA, which will coordinate between a regulatory, an accreditation, and a standards councils, operating "autonomously". Most notably, it takes away grant-disbursal power from the regulatory authority, a power that UGC exercises in the current system.

A coalition of teachers' and students' associations and unions from across the country have raised objections, among others, about the proposition to take away funding power from the regulatory authority, noting that leaving it in the direct control of the Education Ministry would risk grants being subject to

"political influence".

Education Ministry officials explained that even though the NEP 2020 had suggested a separate Council for disbursing grants that the UGC currently disburses to Central universities, "it was a conscious decision that this is not going to be possible" because of the multiplicity of "sources and funnels" through which higher education institutes across the country receive funding.

As soon as the government introduced the Bill in the Lok Sabha on Monday, it proposed that the Bill be sent for deliberation to a 31-member joint committee of Parliament.

Officials said the government hopes to engage in an intense discussion over the Bill's provisions and is encouraging suggestions to be submitted to the panel.

वीबीएसए विधेयक, 2025 के प्रमुख प्रावधान

संरचनात्मक पुनर्गठन

- एकल शीर्ष आयोग (VBSA) की स्थापना करता है।
- कार्यों को तीन अलग-अलग परिषदों में विभाजित करता है:
 - विनियमन
 - प्रत्यायन
 - मानक-सेटिंग
- इन निकायों का उद्देश्य स्वायत्त रूप से कार्य करना है लेकिन समन्वय में।

विनियमन से वित्त पोषण का पृथक्करण

- नियामक प्राधिकरण से अनुदान-वितरण शक्तियों को हटाता है।

- केंद्रीय विश्वविद्यालयों को वित्त पोषण अब सीधे शिक्षा मंत्रालय द्वारा नियंत्रित किया जाएगा।
- संस्थागत प्रदर्शन और नियामक अनुपालन वित्त पोषण के लिए एक महत्वपूर्ण, लेकिन अनन्य मानदंड नहीं रहेगा।

एनईपी 2020 के साथ संरेखण

- एनईपी 2020 "हल्के लेकिन सख्त" विनियमन और हितों के टकराव को कम करने की वकालत करता है।
- यह विधेयक किसी एक निकाय को संस्थानों को विनियमित करने से रोककर और साथ ही उन्हें वित्त पोषित करने से रोककर इसे दर्शाता है।

सरकार के रुख के पीछे तर्क

हितों के टकराव में कमी: UGC के तहत विनियमन और वित्त पोषण का संयोजन, निष्पक्षता से समझौता कर सकता है। पृथक्करण का उद्देश्य निष्पक्ष विनियमन सुनिश्चित करना है।

प्रशासनिक व्यावहारिकता: अधिकारियों का तर्क है कि एक अलग अनुदान परिषद बनाना, जैसा कि एनईपी 2020 में परिकल्पित है, कई फंडिंग चैनलों (केंद्रीय, राज्य, परियोजना-आधारित, बाहरी रूप से सहायता प्राप्त) के कारण अव्यावहारिक है।

समग्र वित्त पोषण दृष्टिकोण: मंत्रालय का दावा है कि वित्त पोषण के निर्णय यांत्रिक नहीं होंगे, बल्कि संस्थागत आवश्यकताओं और परिणामों के व्यापक मूल्यांकन पर आधारित होंगे।

चिंताएँ और आलोचना

राजनीतिक प्रभाव का जोखिम

- शिक्षकों और छात्र संगठनों को डर है कि सीधे मंत्रालय के तहत धन देने से अनुदान आवंटन का राजनीतिकरण हो सकता है और संस्थागत स्वायत्तता कमजोर हो सकती है।

स्वायत्तता बनाम केंद्रीकरण

- जबकि परिषदों को "स्वायत्त" कहा जाता है, वास्तविक स्वायत्तता विवश हो सकती है यदि कार्यपालिका पर वित्तीय निर्भरता बढ़ जाती है।

संघीय निहितार्थ

- उच्च शिक्षा एक समवर्ती सूची का विषय है। वित्त पोषण पर अधिक केंद्रीय नियंत्रण राज्यों और राज्य विश्वविद्यालयों के बीच चिंताएं बढ़ा सकता है।

जवाबदेही तंत्र

- विधेयक में पारदर्शिता और गैर-भेदभावपूर्ण वित्त पोषण निर्णयों को सुनिश्चित करने के लिए सुरक्षा उपायों पर स्पष्टता का अभाव है।

यूपीएससी उत्तर लेखन के लिए महत्व

- एनईपी 2020 में नीति-कार्यान्वयन अंतर को दर्शाता है।
- नियामक स्वतंत्रता, कार्यकारी प्रभुत्व और संस्थागत स्वायत्तता पर सवाल उठाता है।
- शिक्षा शासन सुधार, संघवाद और लोक प्रशासन में नियंत्रण और संतुलन पर बहस के लिए प्रासंगिक।

निष्कर्ष

वीबीएसए विधेयक, 2025 प्रणाली के भीतर लंबे समय से चले आ रहे हितों के टकराव को संबोधित करके एनईपी 2020 के अनुरूप भारत की उच्च शिक्षा नियामक संरचना को तर्कसंगत बनाने के एक निर्णायक प्रयास का प्रतिनिधित्व करता है। जबकि विनियमन और वित्त पोषण का पृथक्करण वैचारिक रूप से सही है, सुधार की सफलता राजनीतिक हस्तक्षेप के खिलाफ सुरक्षा उपायों की मजबूती, अनुदान आवंटन में पारदर्शिता और प्रस्तावित परिषदों की वास्तविक स्वायत्तता पर निर्भर करेगी। संयुक्त समिति के माध्यम से संसदीय जांच विधेयक को परिष्कृत करने का अवसर प्रदान करती है ताकि भारत के उच्च शिक्षा शासन ढांचे में दक्षता, स्वायत्तता और जवाबदेही संतुलित हो सके।

UPSC Prelims Practice Question

प्रश्न: विकसित भारत शिक्षा संस्थान (VBSA) विधेयक, 2025 के संदर्भ में, निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए:

1. विधेयक में यूजीसी, एआईसीटीई और एनसीटीई के स्थान पर एकल शीर्ष आयोग का प्रस्ताव है।
2. प्रस्तावित ढांचे के तहत, केंद्रीय विश्वविद्यालयों को अनुदान वितरण शीर्ष निकाय के तहत एक स्वायत्त परिषद द्वारा किया जाएगा।
3. विनियमन से वित्त पोषण को अलग करना राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी), 2020 की सिफारिशों के अनुरूप है।

उपर्युक्त कथनों में से कौन-सा/से सही है/हैं?

- A. केवल 1 और 2
- B. केवल 1 और 3
- C. केवल 2 और 3
- D. 1, 2 और 3

उत्तर: b)

UPSC Mains Practice Question

प्रश्न : उच्च शिक्षा में विनियमन से धन को अलग करने का उद्देश्य हितों के टकराव को कम करना है, लेकिन यह कार्यकारी अतिरेक की चिंताओं को भी उठाता है। इस कथन पर विकसित भारत शिक्षा प्रतिष्ठान (VBSA) विधेयक, 2025 के संदर्भ में चर्चा कीजिए। (250 शब्द)

भारतीय सेना और मालदीव राष्ट्रीय रक्षा बलों (MNDF) के बीच द्विपक्षीय सैन्य अभ्यास ECUVERIN हाल ही में तिरुवनंतपुरम में एक संयुक्त सत्यापन अभ्यास के साथ संपन्न हुआ। यह अभ्यास हिंद महासागर के दो पड़ोसियों के बीच रक्षा सहयोग को मजबूत करने के उद्देश्य से दो सप्ताह के संरचित और गहन संयुक्त प्रशिक्षण की परिणति को चिह्नित करता है।

प्रीलिम्स के लिए प्रमुख बिंदु

व्यायाम का नाम: ECUVERIN

भाग लेने वाले देश: भारत और मालदीव

शामिल बल: भारतीय सेना और मालदीव राष्ट्रीय रक्षा बल (MNDF)

स्थान (नवीनतम संस्करण): तिरुवनंतपुरम, भारत

अभ्यास की प्रकृति: द्विपक्षीय सैन्य अभ्यास

कोर फोकस क्षेत्र:

- उग्रवाद विरोधी अभियान
- आतंकवाद विरोधी अभियान
- समकालीन और असममित युद्ध वातावरण में संचालन

उद्देश्य:

- दोनों सशस्त्र बलों के बीच पारस्परिकता बढ़ाना
- परिचालन तालमेल और समन्वय में सुधार करें
- सर्वोत्तम प्रथाओं, रणनीति और मानक संचालन प्रक्रियाओं को साझा करें
- आपसी विश्वास और सैन्य-से-सैन्य संबंधों को मजबूत करना

पर्यवेक्षक:

- मेजर-जनरल आर.डी. शर्मा (भारतीय सेना)
- ब्रिगेडियर जनरल अब्दुल्ला इब्राहिम (MNDF)
- दोनों देशों के पर्यवेक्षक प्रतिनिधिमंडल

INBRIEF



India-Maldives joint military exercise ECUVERIN concludes

The bilateral military exercise ECUVERIN between the Indian Army and the Maldives National Defence Forces (MNDF) concluded with a joint validation exercise in Thiruvananthapuram on Tuesday, marking the culmination of two weeks of intensive training. The validation phase was witnessed by Major-General R.D. Sharma of the Indian Army and Brigadier General Abdulla Ibrahim from the Maldivian side, along with observer delegations from both countries. The Indian Army said that the exercise focused on Counter Insurgency and Counter Terrorist operations in contemporary operational environments, with the aim of enhancing interoperability, operational synergy.

सामरिक और क्षेत्रीय महत्व

- मालदीव हिंद महासागर क्षेत्र (आईओआर) में भारत का एक प्रमुख समुद्री पड़ोसी है।
- ECUVERIN भारत के व्यापक समुद्री और पड़ोस नीति ढांचे का पूरक है जैसे:
 - पड़ोसी पहले नीति
 - क्षेत्र में सभी के लिए सुरक्षा और विकास (सागर)
- यह अभ्यास हिंद महासागर क्षेत्र में एक शुद्ध सुरक्षा प्रदाता के रूप में भारत की भूमिका को मजबूत करता है और क्षेत्रीय स्थिरता में योगदान देता है, विशेष रूप से आतंकवाद जैसे गैर-पारंपरिक सुरक्षा खतरों के संदर्भ में।

प्रीलिम्स-ओरिएंटेड टेकअवे

- ECUVERIN एक द्विपक्षीय सेना-स्तरीय अभ्यास है, न कि नौसेना या वायु सेना।
- आतंकवाद विरोधी और आतंकवाद का मुकाबला करने पर ध्यान केंद्रित किया गया है, न कि पारंपरिक युद्ध पर।
- मालदीव राष्ट्रीय रक्षा बल (MNDF) मालदीव का एकीकृत रक्षा बल है।
- इस तरह के अभ्यास छोटे द्वीप देशों के बीच रक्षा कूटनीति और क्षमता निर्माण को बढ़ाते हैं।

निष्कर्षअभ्यास एकवेरिन का सफल समापन भारत और मालदीव के बीच गहरे होते रक्षा सहयोग पर प्रकाश डालता है। आतंकवाद का मुकाबला और पारस्परिकता पर ध्यान केंद्रित करके, यह अभ्यास हिंद महासागर क्षेत्र में सामूहिक सुरक्षा में योगदान देता है और एक स्थिर, सुरक्षित और सहकारी पड़ोस को बढ़ावा देने के भारत के रणनीतिक उद्देश्य के अनुरूप है।

UPSC Prelims Practice Question

प्रश्न : समाचारों में देखा जाने वाला शब्द "एकुवेरिन" निम्नलिखित में से किसके साथ सबसे अच्छा जुड़ा हुआ है?

- (a) हिंद महासागर में एक बहुपक्षीय नौसैनिक अभ्यास
- (b) भारत और मालदीव के बीच एक द्विपक्षीय वायु सेना अभ्यास
- (c) पारस्परिकता को बढ़ाने के उद्देश्य से द्विपक्षीय सैन्य अभ्यास
- (d) एक संयुक्त तटरक्षक गश्त व्यवस्था

उत्तर : (c)

भारत में शहरी वायु प्रदूषण को पारंपरिक रूप से पार्टिकुलेट मैटर (PM2.5 और PM10) और सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड और ओजोन जैसे गैसीय प्रदूषकों के लेंस के माध्यम से समझा गया है। हालांकि, हाल के वैज्ञानिक प्रमाणों ने वायुमंडलीय प्रदूषण के एक नए और खतरनाक आयाम का खुलासा किया है: साँस लेने योग्य माइक्रोप्लास्टिक्स। एनवायरनमेंट इंटरनेशनल में प्रकाशित एक अग्रणी अध्ययन में इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि कैसे ये सूक्ष्म प्लास्टिक कण भारतीय शहरों की हवा में तेजी से मौजूद हैं, जो सार्वजनिक स्वास्थ्य और पर्यावरण शासन के लिए गंभीर और कम मान्यता प्राप्त जोखिम पैदा कर रहे हैं।

Inhalable microplastics, a hidden toxin worsening the air in our cities

A study which researched the threat posed by inhalable microplastics has warned that they can also smuggle in toxic co-pollutants, including heavy metals such as lead and cadmium, and hormone-disrupting chemical compounds like diethyl phthalates; researchers found atmospheric lead levels to be highest in Kolkata, followed by Delhi

Neehanjana Rai

In successive weekends in November, hundreds of Delhi residents gathered at India Gate holding placards that read, "I miss breathing" and "right to live, not just survive". Winter's onset has once again plunged the National Capital Region into dense smog, with the air quality index refusing to exit 'severe' (301-400) or 'very poor' (201-300) levels.

Even now, regulators are scrambling to enforce graded action plans to mitigate the concentration of PM2.5 and PM10 particles in the air.

Into this toxic mix, new research has introduced a previously overlooked problem known as inhalable microplastics. According to scientists, they pose a direct and alarming risk to human health.

Atmospheric pollution has traditionally been associated with the so-called criteria pollutants; aside from the two size-wise groups of particulate matter, these include carbon monoxide, lead, sulphur oxides, nitrogen oxides, and ozone. Of late, however, they've been joined by respirable emerging contaminants – including inhalable microplastics – fuelled in no small part by the production of 400 million metric tonnes of plastics every year. The world also releases 52.1 million tonnes a year of plastic waste into the environment.

A first-of-its-kind comprehensive study published in *Environment International* in November examined inhalable microplastics in India. These are plastic particles smaller than 10 micrometres (µm). The researchers, led by Indian Institute of Science Education and Research Kolkata professor Gopala Krishna Darbha, monitored ambient concentrations at human breathing height (1.5 m) in five highly populated markets in Delhi, Mumbai, Kolkata, and Chennai.

Thus, the team estimated the average concentration of inhalable microplastics in all four cities to be 8.8 µg/m³.

This "means the average city resident is breathing in about 132 micrograms every single day," Dr. Darbha said. "This is a very high daily dose of pollution. The most critical factor is the size of these particles. They are so tiny that they can bypass our natural defences and penetrate deep into the lungs. This chronic exposure presents a serious, ongoing risk to public health."

Researchers, however, said that the greater danger is these plastic particles serving as Trojan horses that smuggle in toxic co-pollutants, including heavy metals like lead and cadmium and hormone-disrupting chemical compounds like diethyl phthalates. The



A smoggy winter morning in Gurugram, on December 16, 2025. PTI

team found atmospheric lead levels to be highest in Kolkata, followed by Delhi.

The team members also found, reportedly for the first time, that the inhalable microplastics can also carry microbes, including harmful fungi like *Aspergillus fumigatus*, that contain antibiotic resistance genes, meaning they could spread infections that don't respond to common antibiotics.

By comparing this information with major toxicology databases, the team found that breathing these contaminated plastic particles was associated with a higher risk of cancer, hormone-related diseases, breast problems, and respiratory illnesses.

Time and place

In all four cities, winter evenings had a mean inhalable microplastic concentration of 32.7 particles/m³ while non-winter evenings averaged 18.8 particles/m³, reflecting a 74% seasonal increase during winter.

There was a significant inter-city variation as well: the data revealed that the residents of Delhi and Kolkata were exposed to high concentrations of inhalable microplastics – 14.8 µg/m³ and 14.23 µg/m³ respectively – whereas Mumbai (2.65 µg/m³) and Chennai (4 µg/m³) fared much better.

"The major factors here are meteorological conditions," Dr. Darbha said alluding to Mumbai and Chennai being coastal cities. "Second is urban population density, and the third is waste mismanagement."

Zeroing in on the particles themselves, the researchers identified 11 kinds of plastics in the air, most of them coming



The most critical factor is the size of these particles. They are so tiny that they can bypass our natural defences and penetrate deep into the lungs.

This chronic exposure presents a serious, ongoing risk to public health

GOPALA KRISHNA DARBHA
INDIAN INSTITUTE OF SCIENCE EDUCATION AND RESEARCH KOLKATA

from places the researchers said people usually overlook.

"The particles were primarily less than 100 µm in size (56.2%), followed by 100–500 µm (24.7%) and over 500 µm (19.1%). Fragments were more common than filaments," the team wrote in its paper.

"Larger filament-shaped airborne microplastics typically ... originate from synthetic textiles or toy fillings. Smaller fragments, often secondary airborne microplastics, arising from packaging, tyre wear, household release, cosmetics, mini- and micro-industries, construction, land) were more prevalent due to their small size and weathering, particularly in areas like Sealdah Market and Chandni Chowk."

Policy imperative

According to Dr. Darbha, the current air quality index may capture "a certain percentage of nanoplastics" but describes the existing evidence as "too preliminary" to correlate AQI values with inhalable microplastics. He did say workers such as traffic police and labourers are especially

vulnerable, since "tyre-wear particles seem to be more carcinogenic and may be a severe threat to their lungs. Policy reform is needed to protect such vulnerable groups."

The study also said the particles persist in the air due to low gravitational settling velocity.

"The government should ban single use plastic and many such polymers," he said, adding that cotton-based clothing is preferable to synthetics and that "recycled and refurbished polyester or reused fabrics ... are capable of releasing these tiny plastics."

He also said that uncontrolled waste disposal, improper waste segregation, and burning emitted poisonous gases and smaller particulate matter, some of which could piggyback on the inhalable microplastic particles into our lungs.

Overall Dr. Darbha said the study provides a new baseline for an emerging environmental crisis: "This is a starting point, and we are definitely looking forward to more results coming up in the country, to have more knowledge-sharing in the ... scientific community as well as among the common public to have more awareness."

Against the backdrop of the accumulating evidence of the persistence and harms of microplastic and nanoplastic pollution, the researchers also expressed hope that the Indian government would take serious measures regarding plastic disposal and worsening air quality.

(Neehanjana Rai is a freelance journalist who writes about indigenous communities, environment, science and health. neehanjanai89@gmail.com)

THE GIST

Atmospheric pollution has traditionally been associated with criteria pollutants; they have now been joined by respirable contaminants fuelled by the annual production of 400 million metric tonnes of plastics, and the release of 52.1 million tonnes of plastic waste

Researchers found that inhalable microplastics can also carry microbes that contain antibiotic-resistance genes; these contaminated plastic particles were also found to be associated with a higher risk of cancer, hormone-related diseases, breast problems, and respiratory illnesses

In all four cities, winter evenings had a mean inhalable microplastic concentration of 32.7 particles/m³ while non-winter evenings averaged 18.8 particles/m³. There was significant inter-city variation: Delhi and Kolkata fared much worse than Mumbai and Chennai

अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष

प्रदूषक की प्रकृति: इनहेलेबल माइक्रोप्लास्टिक्स 10 माइक्रोमीटर से छोटे प्लास्टिक के कण होते हैं, जो मानव फेफड़ों में गहराई से प्रवेश करने और प्राकृतिक श्वसन सुरक्षा को बायपास करने के लिए काफी छोटे होते हैं।

एक्सपोजर की सीमा: अध्ययन में 8.8 µg/m³ की औसत सांद्रता का अनुमान लगाया गया है, जिसका अर्थ है कि एक शहरी निवासी प्रतिदिन लगभग 132 माइक्रोग्राम माइक्रोप्लास्टिक अंदर लेता है।

अंतर-शहर भिन्नता: कोलकाता और दिल्ली में एक्सपोजर का स्तर सबसे अधिक था, जबकि मुंबई और चेन्नई में अपेक्षाकृत कम सांद्रता देखी गई, जिसका मुख्य कारण अनुकूल तटीय मौसम विज्ञान और बेहतर फैलाव था।

मौसमी प्रवृत्ति: सर्दियों के दौरान सांद्रता में लगभग 74% की वृद्धि हुई, जो तापमान उलटा, स्थिर हवा और कम फैलाव की भूमिका को दर्शाता है।

स्वास्थ्य और पर्यावरणीय प्रभाव

ट्रोजन हॉर्स प्रभाव: इनहेलेबल माइक्रोप्लास्टिक्स जहरीले सह-प्रदूषकों के लिए वाहक के रूप में कार्य करते हैं, जिसमें सीसा और कैडमियम जैसी भारी धातुएं और थैलेट्स जैसे अंतःसावी-विघटनकारी रसायन शामिल हैं। यह केवल प्लास्टिक से परे उनकी विषाक्तता को बढ़ाता है।

माइक्रोबियल कैरिज और रोगाणुरोधी प्रतिरोध: अध्ययन में बताया गया है कि एयरबोर्न माइक्रोप्लास्टिक्स एंटीबायोटिक-प्रतिरोधी कवक सहित हानिकारक रोगाणुओं का परिवहन कर सकते हैं, जिससे श्वसन संक्रमण के बारे में चिंताएं बढ़ सकती हैं जिनका इलाज करना मुश्किल हो सकता है।

पुरानी बीमारी का बोझ: टॉक्सिकोलॉजिकल मैपिंग कैंसर, हार्मोनल विकारों, श्वसन रोगों और प्रजनन स्वास्थ्य के मुद्दों के उच्च जोखिमों के लंबे समय तक संपर्क को जोड़ती है, जो भारत की मौजूदा सार्वजनिक स्वास्थ्य चुनौतियों को बढ़ाती है।

स्रोत और ड्राइवर

शहरी गतिविधियाँ: टायर पहनना, सिंथेटिक वस्त्र, पैकेजिंग सामग्री, निर्माण गतिविधियाँ और घरेलू कचरा महत्वपूर्ण योगदान देता है।

अपशिष्ट कुप्रबंधन: खुली डंपिंग, खराब पृथक्करण और अपशिष्ट जलाने से प्लास्टिक के विखंडन को वायुजनित माइक्रोप्लास्टिक में तेज किया जाता है।

शहरी आकृति विज्ञान और घनत्व: उच्च जनसंख्या घनत्व और भीड़भाड़ वाले बाजार, जैसे चांदनी चौक और सियालदह, जोखिम को तेज करते हैं।

शासन और नीतिगत अंतराल

नियामक ब्लाइंड स्पॉट: वायु गुणवत्ता सूचकांक (AQI) सहित वर्तमान वायु गुणवत्ता निगरानी ढांचे, स्पष्ट रूप से इनहेलेबल माइक्रोप्लास्टिक के लिए जिम्मेदार नहीं हैं।

व्यावसायिक भेद्यता: यातायात पुलिस, स्ट्रीट वेंडर्स और निर्माण श्रमिकों जैसे समूहों को अनुपातहीन जोखिम जोखिम का सामना करना पड़ता है।

प्लास्टिक शासन चुनौतियाँ: एकल-उपयोग प्लास्टिक प्रतिबंध जैसी नीतियों के बावजूद, प्रवर्तन अंतराल बना हुआ है, और सिंथेटिक वस्त्र वायु-प्रदूषण के दृष्टिकोण से काफी हद तक अनियमित हैं।

आगे की राह

वायु गुणवत्ता ढांचे में एकीकरण: माइक्रोप्लास्टिक्स को एक उभरते हुए वायु प्रदूषक के रूप में पहचाना जाना चाहिए और निगरानी और स्वास्थ्य-जोखिम आकलन में एकीकृत किया जाना चाहिए।

अपशिष्ट प्रबंधन को मजबूत करना: बेहतर पृथक्करण, पुनर्चक्रण और खुले में जलाने पर सख्त नियंत्रण महत्वपूर्ण हैं।

निवारक रणनीतियाँ: प्राकृतिक रेशों को प्रोत्साहित करना, टायर संरचना को विनियमित करना और चक्रीय अर्थव्यवस्था सिद्धांतों को बढ़ावा देना स्रोत पर उत्सर्जन को कम कर सकता है।

अनुसंधान और जागरूकता: नीति और व्यवहार परिवर्तन को सूचित करने के लिए दीर्घकालिक महामारी विज्ञान अध्ययन और जन जागरूकता अभियान आवश्यक हैं।

निष्कर्ष

भारत की शहरी वायु में सांस लेने योग्य माइक्रोप्लास्टिक की खोज एक आदर्श बदलाव का संकेत देती है कि वायु प्रदूषण को कैसे समझा जाना चाहिए और संबोधित किया जाना चाहिए। ठोस अपशिष्ट की समस्या होने के अलावा, प्लास्टिक अब जटिल स्वास्थ्य प्रभावों के साथ एक श्वसन योग्य पर्यावरणीय विष के रूप में उभरा है। इस चुनौती से निपटने के लिए एक एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो वैज्ञानिक अनुसंधान, नियामक नवाचार, प्रभावी अपशिष्ट शासन और जन जागरूकता को जोड़ती है। जैसा कि भारत बिगड़ती शहरी वायु गुणवत्ता से जूझ रहा है, इस छिपे हुए प्रदूषक को पहचानना और उस पर कार्रवाई करना सार्वजनिक स्वास्थ्य की सुरक्षा और सतत शहरी विकास प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण है।

UPSC Prelims Practice Question

प्रश्न: साँस लेने योग्य माइक्रोप्लास्टिक के संदर्भ में, निम्नलिखित कथनों पर विचार करें:

1. इनहेलेबल माइक्रोप्लास्टिक्स आकार में 10 माइक्रोमीटर से छोटे प्लास्टिक के कण होते हैं।
2. अपने आकार के कारण, वे ऊपरी श्वसन रक्षा तंत्र को बायपास कर सकते हैं और फेफड़ों के गहरे ऊतकों तक पहुंच सकते हैं।
3. वे विशेष रूप से प्राथमिक औद्योगिक प्लास्टिक छर्चों से निर्मित होते हैं।
4. वे भारी धातुओं और रोगजनक सूक्ष्मजीवों के वाहक के रूप में कार्य कर सकते हैं।

उपर्युक्त कथनों में से कौन सा सही है?

- | | |
|-------------------|-----------------|
| A. केवल 1, 2 और 4 | B. केवल 1 और 3 |
| C. केवल 2 और 4 | D. 1, 2, 3 और 4 |

उत्तर : a)

UPSC Mains Practice Question

प्रश्न: साँस लेने योग्य माइक्रोप्लास्टिक शहरी वायु प्रदूषण में एक नई सीमा का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनके स्रोतों, स्वास्थ्य प्रभावों और भारत में मौजूदा वायु गुणवत्ता शासन ढांचे के लिए उनके द्वारा पेश की जाने वाली चुनौतियों पर चर्चा करें। (150 शब्द)

भारत के मध्य और पूर्वी आदिवासी क्षेत्र में माओवादी विद्रोह को अक्सर गरीबी, अविकसितता और सामाजिक-आर्थिक अभाव के चश्मे से समझाया गया है। हालांकि ये कारक महत्वपूर्ण बने हुए हैं, लेकिन हाल की छात्रवृत्ति इस बात को रेखांकित करती है कि शासन की विफलता, विशेष रूप से पांचवीं अनुसूची के क्षेत्रों में, आदिवासी समुदायों के बीच अलगाव का एक निर्णायक चालक रही है। जैसा कि भारत में माओवादी हिंसा में गिरावट और बढ़ते आत्मसमर्पण का सामना करना पड़ रहा है, राज्य के सामने चुनौती केवल विद्रोह का मुकाबला नहीं है, बल्कि माओवादी के बाद के क्षेत्रों में एक विश्वसनीय, समावेशी और अधिकार-आधारित शासन ढांचे का निर्माण है।

The future of governance in post-Maoist India

India's Fifth Schedule areas became the hotbed of Maoist insurgencies due to administrative neglect, exacerbating discontent and a lack of representation of tribal groups in local bodies. Effective governance is crucial to address these issues and mitigate the ongoing challenges in these regions

FULL CONTEXT

Niranjan Sahoo

A key element missing in the dominant discourse around the evolution and growth of the Maoist movement is governance. An overwhelming volume of empirical literature accounts the rapid growth of the Maoist movement in the 1990s and early 2000s to underdevelopment, and structural socio-economic issues. This is evident from the scores of official, non-official and scholarly articles which have attempted to study the "root causes" for insurgency in central and eastern India (popularly called the Red Corridor). These articles have argued for an accelerated development push to address the acute material needs of an impoverished population which includes many vulnerable tribes. As a result of these articulations, the Indian state has been relying on a "two-pronged" approach (combining security and development) to counter the Maoist threat.

This does not mean other factors such as governance, justice redressal and other issues have been completely neglected in the official discourse. On several occasions, policy makers and official reports have sought to bring attention to creating good governance frameworks and quicker justice redressal mechanisms to address the long-standing grievances of the affected population. But there has been little effort to understand the governance challenges that intensified the Maoist insurgency in different cycles.

Unpacking challenges of governance While the Maoist insurgency has evolved in different phases since the Naxalbari uprising (1967), the movement in its current avatar has largely been concentrated around the Fifth Schedule areas of central and eastern India – States with substantial tribal populations.

The Fifth Schedule was conceptualised and offered as a new social contract to the *adivasis* in these regions, by the framers of the Constitution, taking into account the special needs of the population. The Schedule provided a legal framework and instrumentality for governance of these tribal homelands. It offered special provisions such as the Tribal Advisory Council with three-fourth of members from the *adivasi* population and a special financial provision via the tribal sub-plan. Further, the Governor of each State was given discretionary powers to oversee the enforcement of these provisions, particularly with respect to checking land alienation.

However, extensive provisions notwithstanding, the local populations were subjected to the severest forms of discrimination and exploitation in everyday life. As recorded in the Planning Commission's Expert Committee Report (2008), a vast region with abundant natural resources was reduced to penury due to state neglect and poor governance. That these special provisions were of little use is evident from tribal populations' persistently low social and economic status compared to other social groups. The Oxford University Multidimensional Poverty Index in 2010 ranked the region worse than Sub-Saharan Africa. Yet, for tribal populations, the far bigger challenge was how to exercise their rights over the land and forests. Despite legal safeguards and constitutional protection against arbitrary land acquisition, millions of them were dispossessed to penury. In his seminal study, writer Walter Fernandes



Returning home: Maoists with copies of the Constitution of India, after they surrendered at the police lines in Jagdalpur in Chhattisgarh's Bastar district, on October 17, 2010.

found that "more tribals have lost their land since the commencement of economic liberalisation than any time in the post-independent history".

Thus, while the Constitution makers imagined a new lease of life for the *adivasis* under the Fifth Schedule, successive governments failed to bring up appropriate governance structures to transform this lofty vision into reality. The same colonial structures and administrative forms, rules of business, and justice system were retained for Scheduled Areas, which made tribal groups, with very low literacy, barely able to understand these rules and the modern justice system.

A lack of representation

What deepened the alienation was the complete absence of locals in the administrative units implementing provisions enumerated in the Fifth Schedule. B.D. Sharma, the then commissioner of the Scheduled Castes/Scheduled Tribes Commission, succinctly put that "the personnel who are overwhelmingly outsiders carried their attitudes, bias and lived experiences while performing day to day tasks". Importantly, apex bodies such as a separate Ministry of Tribal Welfare, and the National Commission for Scheduled Tribes created to oversee the execution of the special provisions for the tribal population, as vividly observed by the Mungekar Committee (2009), did very little to stop the exploitation.

Moreover, while the Governors are constitutionally assigned to protect the interests of *adivasis* in Schedule areas, not a single Governor has acted since Independence in these regions. These institutions have been further

handicapped by weak and ineffective service delivery institutions such as health, education, revenue, police, and the judiciary.

The lone exception was the Panchayat Extension to Scheduled Areas Act (PESA), 1996. PESA was enacted to address *adivasi* underrepresentation and alienation in the form of "self-governance". These democratic forums were envisioned to create space for *adivasis* to take their own decisions on welfare issues, land, natural resources, livelihood and preservation of culture and their way of life. While PESA made some substantial changes by improving political representation at the lower level of governance, key provisions were routinely violated. The Expert Committee Report (2008) found flagrant violations of PESA by the appointed officials. One of the most abused provisions has been with regards to land acquisition.

To sum up, governance maladies and relatively low political priority accorded to the Fifth Schedule in many ways created a fertile ground for the Maoist leadership to mobilise the aggrieved *adivasi* population against the Indian state. The growing governance deficits which directly impacted development, welfare functions and mitigation of local grievances created an opportunity for the Maoists to spread their ideologies of a people's government (*Janatan Sarkar*). There is a rich body of evidence that indisputably credits tribal frustrations, anger and low trust in governance institutions as the reasons that drove many *adivasis* to support Maoist ideology and revolutionary missions. Many relied on the Maoist movement as some sort of instrument to get justice from state agencies such as the police, forest and

revenue departments (which they often viewed as corrupt and oppressive). For instance, the entire Dandakaranya region largely characterised by extreme underdevelopment and poor governance was easily captured by the underground Maoists in the 1990s with the promise of providing ownership to *adivasis* over lands, and the forest (under the broad slogan of *Jal, Jungle and Zamindari*). Persistent governance and development deficits created a space for Maoists to run parallel governments (offering critical services such as paramedics, schools, food rations and speedy justice through kangaroo courts) in many of their strongholds.

Need for a new imagination

Going forward, India must pay close attention to governance paradoxes that continue to plague most regions under the Fifth Schedule. In recent years, there has been visible improvement in key service functions, particularly with respect to welfare schemes and critical infrastructure (roads, electricity, telecom) in Maoist affected regions. Both the Centre and affected States have found ways to improve service delivery functions via digital technology and cash transfer. However, critical service delivery institutions such as justice, health, education, policing, and revenue functions remain thin and unsatisfactory. Persistent structural bottlenecks (under-representation of locals) in the existing governance system have a significant bearing in their effectiveness.

On the other side, crucial rights-based legislations like the Forest Rights Act (FRA) and PESA need greater political push from the Centre as well affected States. The FRA which remains a key legal tool to protect the rights of *adivasis* and forest dwellers to access forest resources for their sustenance is battling for its survival today. While many core provisions have been violated by state institutions, there have also been amendments and judicial interventions in recent years which have diluted its original mandate and effectiveness. In addition, the enactment and expansion of the Compensatory Afforestation Fund (CAF) Act, 2016 has grossly diluted legal safeguards, apart from affecting the livelihoods of forest dwellers in India. Similarly, PESA despite initial promises faces growing resistance from the States concerned. Under pressure to unlock huge mineral deposits, most State governments in Fifth Schedule Areas have undermined the powers granted to Gram Sabhas under PESA, particularly on the issues of granting consent for mining/land acquisition. Incidentally, the most widespread violations of PESA have been in the most Maoist-affected State of Chhattisgarh.

Thus, going forward priorities must include the reversal of political and administrative under-representation of *adivasis*. While there are mandatory quotas at the local levels, considering these self-governing bodies lack real autonomy and financial power, representation remains largely performatory. The permanent bureaucracy (overwhelmingly non-tribal) still calls the shots. Given the persistent alienation and trust deficits among the local population, the post-Maoist Fifth Schedule Areas governance vision can benefit by borrowing some leathers from the Sixth Schedule Areas which are governed by Autonomous Districts/Zonal Councils. In short, post-Maoist India needs a new governance charter.

Niranjan Sahoo is Senior Fellow, Observer Research Foundation, Delhi.

THE GIST

While the Maoist insurgency has evolved in different phases since the Naxalbari uprising (1967), the movement in its current avatar has largely been concentrated around the Fifth Schedule areas of central and eastern India – States with substantial tribal populations.

As recorded in the Planning Commission's Expert Committee Report (2008), a vast region with abundant natural resources was reduced to penury due to state neglect and poor governance.

Going forward, India must pay close attention to governance paradoxes that continue to plague most regions under the Fifth Schedule.

शासन की कमी और उग्रवाद की जड़ें

संविधान की पांचवीं अनुसूची की परिकल्पना जनजातीय सलाहकार परिषदों, जनजातीय उप-योजना और भूमि हस्तांतरण को रोकने के लिए राज्यपालों की विवेकाधीन शक्तियों जैसे सुरक्षा उपायों के माध्यम से जनजातीय हितों की रक्षा के लिए एक विशेष सामाजिक अनुबंध के रूप में की गई थी। हालांकि, ये संवैधानिक वादे काफी हद तक पूरे नहीं हुए।

प्रमुख शासन विफलताओं में शामिल हैं:

- प्रशासनिक उपेक्षा और औपनिवेशिक निरंतरता: आदिवासी सामाजिक वास्तविकताओं से अलग जटिल कानूनी-प्रशासनिक प्रणालियों को बनाए रखना, जिससे न्याय तक पहुंच मुश्किल हो जाती है।
- भूमि और वन अलगाव: संवैधानिक सुरक्षा के बावजूद, खनन, बुनियादी ढांचा परियोजनाओं और वन नीतियों के कारण बड़े पैमाने पर विस्थापन ने आजीविका सुरक्षा को नष्ट कर दिया।
- संस्थागत उदासीनता: जनजातीय सलाहकार परिषद, राज्यपालों के कार्यालय और यहां तक कि राष्ट्रीय स्तर के आयोग जैसे निकाय प्रभावी ढंग से हस्तक्षेप करने में विफल रहे।
- स्थानीय लोगों का कम प्रतिनिधित्व: शासन संस्थानों में गैर-आदिवासी अधिकारियों का वर्चस्व था, जिससे अविश्वास, सांस्कृतिक असंवेदनशीलता और कमजोर जवाबदेही पैदा हुई।
- इन विफलताओं ने माओवादियों की लामबंदी के लिए उपजाऊ जमीन तैयार की, खासकर दंडकारण्य जैसे क्षेत्रों में, जहां विद्रोहियों ने जनता सरकार के बैनर तले न्याय, कल्याण वितरण और भूमि नियंत्रण की समानांतर प्रणाली की पेशकश करके शासन की शून्यता का फायदा उठाया।

सुरक्षा-विकास प्रतिमान की सीमाएं

- भारत की माओवाद-रोधी रणनीति सुरक्षा अभियानों और विकास पहलों के दोहरे दृष्टिकोण पर निर्भर रही है। जबकि हाल के वर्षों में बुनियादी ढांचे, डिजिटल सेवा वितरण और कल्याण हस्तांतरण में सुधार देखा गया है, मुख्य शासन संस्थान- पुलिसिंग, न्यायपालिका, स्वास्थ्य, शिक्षा और राजस्व प्रशासन कमजोर बने हुए हैं।
- इसके अलावा, सहभागी शासन के बिना विकास ने अक्सर अलगाव को गहरा कर दिया है। राज्य संस्थानों में विश्वास के क्षरण ने कई आदिवासियों को माओवादी संरचनाओं को उनकी जबरदस्ती प्रकृति के बावजूद अधिक सुलभ और उत्तरदायी के रूप में देखा।

अधिकार आधारित कानूनों की भूमिका

- पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम, 1996 (पीईएसए) और वन अधिकार अधिनियम, 2006 (एफआरए) जैसे कानूनों का उद्देश्य ग्राम सभाओं को सशक्त बनाकर और वन-आधारित आजीविका को मान्यता देकर ऐतिहासिक अन्याय को ठीक करना था। हालांकि:
- पेसा प्रावधानों, विशेष रूप से भूमि अधिग्रहण और खनन के लिए सहमति के संबंध में, राज्य सरकारों द्वारा नियमित रूप से उल्लंघन किया गया है।
- एफआरए को प्रशासनिक प्रथाओं, न्यायिक हस्तक्षेपों और प्रतिपूरक वनीकरण कोष (सीएएफ) अधिनियम, 2016 जैसे प्रतिस्पर्धी कानूनों के माध्यम से कमजोर पड़ने का सामना करना पड़ा है, जो आदिवासी आजीविका पर पर्यावरणीय लेखांकन को प्राथमिकता देता है।
- ये रुझान उग्रवाद के बाद के संदर्भ में भी बहिष्करण की स्थितियों को फिर से बनाने का जोखिम उठाते हैं।

एक नए शासन की कल्पना की ओर

- माओवाद के बाद के भारत में शासन में गुणात्मक बदलाव की आवश्यकता है, न कि केवल वृद्धिशील सुधारों की। प्रमुख प्राथमिकताओं में शामिल हैं:
- स्थानीय निकायों को वास्तविक वित्तीय और निर्णय लेने की स्वायत्तता प्रदान करके, प्रतीकात्मक कोटा से परे, आदिवासियों के राजनीतिक और प्रशासनिक प्रतिनिधित्व को गहरा करना।
- राजनीतिक प्रतिबद्धता और कानूनी सुरक्षा उपायों के माध्यम से पेसा और एफआरए कार्यान्वयन को मजबूत करना।
- जिला या क्षेत्रीय परिषदों के माध्यम से अधिक स्वायत्तता सहित छठी अनुसूची के क्षेत्रों से सबक लेकर शासन संरचनाओं में सुधार करना।
- सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील प्रशासन, पारदर्शी पुलिसिंग और सुलभ न्याय वितरण सुनिश्चित करके संस्थानों में विश्वास बहाल करना।

निष्कर्ष

माओवादी विद्रोह में कमी भारत को अपने पांचवीं अनुसूची के क्षेत्रों में शासन की फिर से कल्पना करने का एक महत्वपूर्ण अवसर प्रदान करती है। स्थायी शांति को केवल सुरक्षा कार्यों या कल्याण वितरण के माध्यम से सुरक्षित नहीं किया जा सकता है; यह सार्थक स्वशासन, अधिकारों की सुरक्षा और संस्थागत जवाबदेही के माध्यम से आदिवासी समुदायों के बीच संवैधानिक विश्वास को बहाल करने पर निर्भर करता है। भागीदारी, स्वायत्तता और न्याय में निहित एक पोस्ट-माओवाद शासन चार्टर न केवल उग्रवाद के पुनरुत्थान को रोकने के लिए आवश्यक है, बल्कि भारत की आदिवासी आबादी के लिए संविधान के मूल वादे को पूरा करने के लिए भी आवश्यक है।

UPSC Prelims Practice Question

प्रश्न : भारत के संविधान की पांचवीं अनुसूची के संदर्भ में, निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए:

1. यह अनुसूचित जनजातियों के अधिकांश सदस्यों के साथ जनजातीय सलाहकार परिषदों का प्रावधान करता है।
2. अनुसूचित क्षेत्रों में भूमि हस्तांतरण को रोकने के लिए राज्यपाल के पास विवेकाधीन शक्तियां हैं।
3. पांचवीं अनुसूची छठी अनुसूची के समान स्वायत्त जिला परिषदों के निर्माण को अनिवार्य करती है।

उपर्युक्त कथनों में से कौन सा सही है?

- (a) केवल 1 और 2 (b) केवल 2 और 3
(c) केवल 1 (d) 1, 2 और 3

उत्तर : a)

UPSC Mains Practice Question

प्रश्न : जनजातीय अलगाव को दूर करने में पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम, 1996 की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए। इसकी क्षमता काफी हद तक अवास्तविक क्यों रह गई है? (150 शब्द)

भारतीय रुपया 2025 में 91 प्रति अमेरिकी डॉलर के निशान को पार कर गया और सबसे कमजोर एशियाई मुद्रा के रूप में उभर रहा है, जो बढ़ी हुई वैश्विक और घरेलू आर्थिक अनिश्चितताओं को दर्शाता है। जबकि मुद्रा मूल्यहास अक्सर मुद्रास्फीति, बाहरी ऋण और पूंजी प्रवाह पर चिंता पैदा करता है, नीति निर्माताओं और विशेषज्ञों का सुझाव है कि रुपये की वर्तमान चाल व्यापक आर्थिक संकट के संकेत के बजाय एक कैलिब्रेटेड और रणनीतिक समायोजन का हिस्सा हो सकती है। भारत के बाहरी क्षेत्र के लचीलेपन का आकलन करने के लिए इस मूल्यहास के कारकों और निहितार्थों को समझना महत्वपूर्ण है।

रुपये के मूल्यहास के पीछे प्रमुख कारक

वैश्विक व्यापक आर्थिक दबाव

- बढ़ती अमेरिकी बॉन्ड पैदावार ने डॉलर को मजबूत किया है, जिससे सुरक्षित परिसंपत्तियों की ओर पूंजी पुनर्निवेश शुरू हो गया है।
- बैंक ऑफ जापान की दर में बढ़ोतरी की उम्मीदों के कारण येन कैरी ट्रेड को बंद कर दिया गया है, जिससे वैश्विक जोखिम से बचने और उभरती बाजार मुद्राओं पर दबाव पड़ रहा है।

पूंजी बहिर्वाह

- विदेशी पोर्टफोलियो निवेशकों (एफपीआई) ने दिसंबर की शुरुआत में करीब 2.7 अरब डॉलर की निकासी की थी, जो वैश्विक व्यापार तनाव के बीच जोखिम की भावना को दर्शाता है।
- इस तरह के बहिर्वाह डॉलर की मांग में वृद्धि से रुपये को सीधे तौर पर कमजोर करते हैं।

व्यापार और भू-राजनीतिक अनिश्चितता

- भारत-अमेरिका व्यापार वार्ताओं और व्यापक वैश्विक व्यापार-युद्ध के माहौल के आसपास की अनिश्चितता ने निवेशकों के विश्वास पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है।
- अमेरिकी प्रशासन के संरक्षणवादी संकेतों ने मुद्रा बाजारों में अस्थिरता को बढ़ा दिया है।

भारतीय रिज़र्व बैंक (आरबीआई) का नीतिगत रुख

- आरबीआई का अपेक्षाकृत सीमित हस्तक्षेप एक विशिष्ट विनिमय दर स्तर का बचाव करने के बजाय बाजार-निर्धारित आंदोलनों की अनुमति देने के लिए एक सचेत विकल्प का सुझाव देता है।

क्या मूल्यहास चिंता का कारण है?

- आवश्यक रूप से नहीं। कई व्यापक आर्थिक बुनियादी सिद्धांत मजबूत बने हुए हैं:

Rupee breaches 91 level, turns weakest Asian currency in '25

With India's growth strong and inflation contained, policymakers may be 'comfortable' allowing some depreciation, currency experts opined

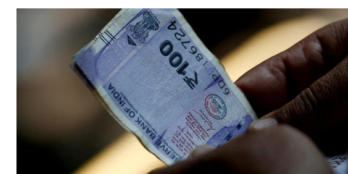
Lalendu Mishra
MUMBAI

The rupee on Tuesday breached one more psychological mark by depreciating beyond 91 to 91.14 on the spot market against the U.S. dollar during intraday trade, making it one of the weakest major currencies globally this year and the weakest in Asia in 2025.

But it gained a bit during the day to close at 90.93 as compared with its previous close of 90.78, down nearly 16 paise, a fresh all time low.

Anindya Banerjee, Head Currency and Commodity Research, Kotak Securities, said the pressure on the currency is being driven by three key factors: sentiment, capital flows, and the global macro backdrop. "The uncertainty around the pending India-U.S. trade deal and the broader trade-war environment is weighing on markets. From a flows perspective, foreign portfolio investors have pulled out close to \$2.7 billion in the first two weeks of December alone, already among the largest monthly outflows this year, with the month still unfinished," he said.

He said globally rising U.S. bond yields and expectations of a Bank of Japan rate hike have trig-



Currency cauldron: Uncertainty around the India-U.S. trade deal and the trade-war environment is weighing on markets. REUTERS

gered an unwinding of the yen carry trade.

"This has led to risk aversion across equities, credit, crypto, and some commodities, adding speculative pressure on emerging-market currencies, including the rupee," he added. Stating that the rupee may head towards 92, he said, RBI's relatively limited intervention so far appeared deliberate.

"With India's growth strong and inflation contained, policymakers may be comfortable allowing some currency depreciation, especially in a global trade-war environment where a weaker currency can support export competitiveness," he said.

"And on a day when the rupee has reached 91, I think it is important to also flag that we have been expecting [it] for a while, but not wide depreciation. And there are strategic and tactical decisions involved in the rupee," said Neel-

kanth Mishra, Chief Economist of Axis Bank, Head of Global Research at Axis Capital, and part time member at the Prime Minister's Economic Advisory Council (PMEAC).

"I think the RBI is letting the currency move around a bit. It's not a bad idea. We will have to see at what level they [would say] in the three-to-six-month basis, more than this volatility is not allowed. I think the mistake was in pegging it [rupee to \$] at 83. Those past sins are still haunting us," he emphasised.

In a note, Finrex Treasury Advisors said the rupee made a new lifetime low as dollar buying continued with news that U.S. President Donald Trump had not agreed to the new proposals as he wanted agri and its products to be included in the proposal which India had not agreed to.

(With inputs from Ashokamithran T)

- साथियों के सापेक्ष मजबूत आर्थिक विकास।
- मुद्रास्फीति को नियंत्रित किया, नीतिगत स्थान प्रदान किया।
- पर्याप्त विदेशी मुद्रा भंडार, जिससे अस्थिरता अत्यधिक होने पर भारतीय रिज़र्व बैंक हस्तक्षेप कर सके।

विशेषज्ञों का तर्क है कि मध्यम मूल्यहास कर सकता है:

- चुनौतीपूर्ण वैश्विक व्यापार वातावरण में निर्यात प्रतिस्पर्धात्मकता में सुधार करना।
- बाहरी व्यवधानों के खिलाफ एक सदमे अवशोषक के रूप में कार्य करें, बजाय एक कृत्रिम खूंटी की रक्षा के लिए भंडार को कम करने के बजाय।

हालाँकि, जोखिम बने रहते हैं:

- उच्च आयात लागत, विशेष रूप से कच्चे तेल और उर्वरकों के लिए।
- बाहरी ऋण अदायगी का बोझ बढ़ा।
- यदि मूल्यहास अव्यवस्थित हो जाता है तो संभावित मुद्रास्फीति का दबाव।

व्यापक नीतिगत निहितार्थ

- यह प्रकरण अंतर्निहित मुद्रा पेगिंग की सीमाओं को रेखांकित करता है, क्योंकि रुपये को निश्चित स्तर पर रखने के पिछले प्रयासों ने बाद में समायोजन दबाव बनाया है।
- एक प्रबंधित फ्लोट व्यवस्था, क्रमिक मूल्यहास के लिए सहिष्णुता के साथ लेकिन अत्यधिक अस्थिरता के प्रतिरोध, अधिक टिकाऊ प्रतीत होती है।
- निर्यात विविधीकरण, आयात निर्भरता में कमी और स्थिर व्यापार समझौते जैसे संरचनात्मक उपाय दीर्घकालिक मुद्रा स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण हैं।

निष्कर्ष

रुपये का प्रति डॉलर 91 से अधिक गिरना घरेलू वृहद आर्थिक कमजोरी के बजाय वैश्विक वित्तीय सख्ती, पूंजी बहिर्वाह और व्यापार संबंधी अनिश्चितताओं के जटिल परस्पर क्रिया को दर्शाता है। विकास की मजबूत, मुद्रास्फीति नियंत्रण में और पर्याप्त भंडार के साथ, आरबीआई एक व्यापक व्यापक आर्थिक रणनीति के हिस्से के रूप में एक मापा मूल्यहास की अनुमति देने में सहज प्रतीत होता है। मुख्य चुनौती मूल्यहास को रोकने में नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करने में है कि मुद्रा की चाल व्यवस्थित, पूर्वानुमानित और भारत के दीर्घकालिक आर्थिक बुनियादी सिद्धांतों के अनुरूप बनी रहे। इस अर्थ में, रुपये में हालिया उतार-चढ़ाव नीतिगत विफलता के बजाय रणनीतिक लचीलेपन का प्रतिनिधित्व कर सकता है।

UPSC Mains Practice Question

प्रश्न : भारतीय रुपये का हालिया अवमूल्यन वैश्विक व्यापक आर्थिक दबावों के साथ-साथ भारतीय रिज़र्व बैंक के विकसित नीतिगत विकल्पों को दर्शाता है। इस संदर्भ में, 2025 में रुपये के सबसे कमजोर एशियाई मुद्रा बनने के पीछे के कारकों की जांच करें। मुद्रा के कैलिब्रेटेड मूल्यहास की अनुमति देने के संभावित लाभों और जोखिमों पर चर्चा करें।

The three revolutions reshaping American power

When United States Secretary of State Marco Rubio proposed restructuring the G-20 into an elite “inner caucus” of powerful states, it should have dominated the week’s geopolitical news. It signalled a major reordering of global economic governance, shifting rule-making to a narrower group and weakening emerging economies. Yet, the proposal barely registered. It was immediately eclipsed by the release of the 2025 U.S. National Security Strategy (NSS), that embodied the same underlying ideological shift. Days later, the Heritage Foundation, the intellectual core of U.S. President Donald Trump’s MAGA project, issued its own blueprint, Restoring America’s Promise: 2025-26.

The alignment between the G-20 restructuring, the NSS, and Heritage 2026 reveals three simultaneous revolutions in American statecraft: a transformation of political morality, a recasting of foreign policy, and a restructuring of global economic governance. The common thread is the institutionalisation of exclusion and the acceptance of unequal burdens as policy design rather than error. In this sense, cruelty functions as an analytical term, capturing a system in which harm is anticipated, normalised, and strategically deployed.

Shrinking of civic space

The first revolution is internal. Mr. Trump’s political project dismantled the traditional moral architecture of American public life. Norms of restraint, institutional deference and civic responsibility gave way to an ethos where transgression signalled authenticity and the erosion of shame became a political asset. The NSS integrates this shift into formal doctrine by treating internal cultural cohesion, ideological alignment and demographic stability as national security requirements.

The Heritage document demands bureaucratic remaking, ideological vetting, and mass personnel turnover. The NSS echoes this through sovereign autonomy, institutional suspicion and domestic culture as security treating independent institutions not as correctives but as obstacles to political will.

Cruelty here takes the form of permissive



Anil Raman
is Research Fellow,
Takashila
Institution and a
retired brigadier

The central thread around the internal, external and economic policies is an ‘architecture of cruelty’, where harm is anticipated, normalised, and strategically deployed

indifference: hardship from administrative purges, narrowing civic space, or punitive regulatory change is not acknowledged as collateral damage but folded seamlessly into the architecture of governance.

Foreign policy around conditionality

The second revolution is external. The U.S. traditionally relied on predictable commitments and institutional stability. Even Mr. Trump’s first-term disruptions occurred within recognisable boundaries. The 2025 NSS departs sharply from this tradition.

Alliances are reframed as conditional transactional contracts with obligations justified continuously. The Western Hemisphere displaces Europe and the Indo-Pacific as the primary theatre, reviving the Monroe Doctrine. Migration, a domestic concern, is elevated into the central security threat, while institutions once amplifying American power are described as constraints on sovereignty.

The Heritage document provides the ideological framework. It frames multilateral bodies as infringements of sovereignty, border control as geopolitics, and allied compliance as contingent on ideological alignment, not shared interest.

The result is neither isolationism nor traditional realism. It is selective dominance: assertion where leverage is high, retreat where obligations are costly, and judging partnerships by conformity not capability. The structural effect is fragile alliances, revisionist adversaries and a fragmentation of global order.

The third revolution is economic. Mr. Rubio’s G-20 proposal is not an administrative adjustment but the formalisation of a tiered global economy, an architecture of privileged rule-makers and peripheral rule-takers. Decision-making on debt relief, trade standards and climate finance will consolidate within a narrower circle of states with the capacity to shape outcomes.

The NSS fits precisely within this trajectory. Its emphasis on reshoring, tariff leverage and industrial sovereignty promoted toward a hemispheric economic model centred on North

America. Heritage 2026 expands on the logic: globalisation is treated as a strategic vulnerability and multilateral economic systems as threats to national autonomy.

The consequences will be felt disproportionately by countries with limited negotiation power. Debt restructuring will become more conditional, supply chain diversification more politically selective, and access to global capital more closely tied to geopolitical alignment. The predictable hardship that follows, from inflationary pressures to disrupted export markets, will fall on global and domestic workers.

Cruelty here is systemic: unequal distribution of economic pain is treated as a mechanism for stabilising a more hierarchical global order

A return of imperial logic

Across these three revolutions runs a common thread: the restoration of a colonial-imperial mindset. Not territorial colonialism but a structural world-view built on hierarchy, entitlement, and the presumption that the strong may impose costs while the weak absorb them.

The NSS provides bureaucratic vocabulary; the Heritage supplies the ideological foundations.

The analytical utility of cruelty lies in naming this organising logic. It captures a system where the suffering generated by policy is neither incidental nor unfortunate but integrated into the functioning of the political and economic order.

The G-20 restructuring and the 2025 NSS are manifestations of the same deeper shift. The world is entering an era where the U.S. seeks to protect its sovereignty through contraction, assert influence through hierarchy, and reshape global governance through exclusion.

The final irony is that the victims of this reordering are not confined to distant shores. They live in Maputo and Dhaka, yes, but also in Harlan, Kentucky. The architecture of cruelty is global, but its consequences are intimate. It reaches the world, but it also circles back home.



The Trump NSS, Europe’s existential crisis

Hope is not a strategy. For most of this year, European leaders have hoped that the Trump Administration has not actually meant its President’s oscillating support for the North Atlantic Treaty Organization (NATO), its Vice-President’s berating his European hosts in Munich over their liberal values and immigration policies, President Donald Trump’s tirade against migration at the United Nations, and of course his mercurial support for Ukraine. The hope was that, all things considered, America would ultimately stand with Europe.

The Trump Administration’s National Security Strategy – a 33 page document that spends much time congratulating the President for saving America from apparently terminal decline as it charts an unapologetically MAGA-esque America-first mercantilist position – appears not to notice Africa, Australia and New Zealand. It sweeps by Asia as it focuses strongly on perceived trade imbalances with China and lands squarely on a defence of the ‘Western Hemisphere’ according to American interests while lamenting the decline of Europe. Europe is a problem, not an ally.

The stand on Europe

In ‘Promoting European Greatness’, the NSS warns of Europe’s ‘civilizational erasure’, precipitated by the European Union (EU)’s policies on migration and freedom of speech, ‘the suppression of political opposition’, and the ‘loss of national identities and self-confidence’. In case there was any doubt about which migrants were unwelcome, the NSS declares that if Europe continues on its present trajectory, ‘within a few decades ... certain NATO members will become majority non-European’. The U.S. will help Europe regain its ‘former greatness’ by choosing ‘patriotic European parties’ to promote what this administration views as ‘genuine democracy’ and ‘unapologetic celebrations of European nations’ individual character and history’. To most Europeans, at best this reads as a meddling in the internal politics of sovereign nations, and at worst as regime change.

Europe, the NSS states, needs to stand on its own feet, assume ‘primary responsibility for its own defense’ and re-establish ‘strategic stability with Russia’. NATO ‘cannot be a perpetually expanding alliance’, a warning of course to Ukraine, but also an interesting glossing over of Sweden and Finland’s accession to the alliance after Russia invaded Ukraine in 2022. In this document, the threat is not Russia and its



Priyanshi Malik
writes on nuclear
politics and security

With the Trump Administration’s National Security Strategy making it clear that American support to Europe is now faint, it remains to be seen how Europe responds

invasion of a sovereign nation, but Europe’s cultural decay. The tramp of the jackboots of 1930s Europe echoes with every mention of civilisational decline.

Of course, an administration’s national security strategy is not policy, but a guide to its thinking. They can and have been over-ridden by events, most notably George H.W. Bush’s 1990 NSS, which was overtaken by the fall of the Berlin Wall, German reunification and the first Gulf War. Observers could chart the evolution of the administration’s thinking in the two subsequent iterations of 1991 and 1993.

As a high-level document, the NSS often provides the lens through which to interpret an administration’s foreign policy goals and is assumed to set the tone for the administration’s national defence strategy, its Quadrennial Defense Review and national military strategy. Mr. Trump’s famously mercurial nature might caution against viewing it as declared policy. However, given that this is a Congress-mandated document, it is more than just a rhetorical exercise: while it should not be taken literally, it should be taken seriously.

What Europe’s response could be

As the dust settles, Europe now faces three options in responding: it can ignore the NSS and hope that it will go away; its leaders can dial up their blarney of Mr. Trump in the hope that he will change his mind on Europe; or Europe can face up to the prospect that Mr. Trump’s America is not a reliable ally and that they will need to fend for themselves.

Europe tried a mixture of the first two strategies after J.D. Vance’s outburst at the Munich Security Conference. After some tepid talk of needing to put together to see off Russian President Vladimir Putin’s ‘imperialist’ ambitions in trying to ‘rewrite history’ or the need for Europe to wean itself off U.S. dependence, Europe doubled down on doing whatever it would take to keep America in NATO and Europe. Britain flattered Mr. Trump with an invitation for an unprecedented second state visit. Germany’s Friedrich Merz forgot about his observations of February this year as Chancellor-in-waiting that his ‘absolute priority will be to strengthen Europe ... so that ... we can really achieve independence from the USA’.

Germany has since abandoned half-explored plans of developing European capabilities and ordered more American military kit, which is

dependent on American intelligence to work.

NATO’s Hague Summit of June this year will be remembered as much for European states agreeing to raise their military spending to 5% of GDP as for Secretary-General Mark Rutte’s calling Mr. Trump ‘Daddy’.

The third option will not be easy. Europe has never defended itself as an entity and there is no concept of integrated European defence. Even limited projects of joint development of military kit tend not to get very far, as the stalled Franco-German project on sixth generation fighter jets demonstrates. If the U.S. pulls American troops out of Europe – as this administration has periodically hinted it might do – then Europe will have a serious manpower problem that experiments in ‘voluntary’ conscription will not even begin to address. Then there is the question of nuclear deterrence and Britain’s uneasy post-Brexit relationship with the EU and Europe.

The state of the world order

How Europe responds will have implications beyond the continent. Mr. Trump’s NSS, with its attack on transnational institutions (that he insists ‘undermine political liberty and sovereignty’), its dismantling of the post-war trading order in favour of a mercantilist America-first policy; and the signalling of a U.S. retreat into its own ‘Hemisphere’ (however that might be defined, and with the implication that China and Russia are free to carve up the rest of the world as long as they do not impinge on America’s trading footprint) have profound implications for the rest of the world. The post-war world order that America helped shape and uphold is imperfect and crumbling. The power imbalances at the United Nations and the Bretton Woods Institutions that help anchor expectations of peace, security, development and trade reflect an outdated world order. But, however imperfect this rules-based system might be, it is still a bulwark against a descent into a Hobbesian free-for-all, where might makes right.

The debate about this National Security Strategy is, therefore, not about a document that might shed light on an administration’s thinking. It is about whether Europe chooses to defend a rules-based liberal order or defers to a President whose transactional and racist view of the world will have consequences that stretch far beyond his borders.



India and the U.S.: 2005 versus 2025

In 2005, when I served on the Prime Minister's Task Force on Global Strategic Developments chaired by K. Subrahmanyam, India and the U.S. stood at the threshold of a historic transformation. Washington had declared that it wished to "help India become a major world power in the 21st century." It was an extraordinary statement, not merely because of what it promised but because of the confidence it reflected. The U.S. then still believed that strengthening responsible rising powers would strengthen the world. That belief seemed to form, for many, the bedrock of the civil nuclear breakthrough and of a strategic partnership built on a shared sense of possibility.

The U.S.'s retreat

Reading the 2025 U.S. National Security Strategy (NSS) is therefore an unsettling experience. The document is saturated with self-praise. It claims to have "brought our nation – and the world – back from the brink of catastrophe and disaster" and asserts that "no administration in history has achieved so dramatic a turnaround in so short a time." But this assertiveness feels defensive. It projects a nation unsure of its place in a world it no longer fully comprehends, yet unwilling to concede that uncertainty even to itself. The result is a strategy that is less a map for global action and more an exercise in national reassurance.

The contrast with the intellectual spirit of 2005 could not be sharper. Then, Washington spoke the language of partnership. Today, it speaks the language of burdens. "The days of the United States propping up the entire world order like Atlas are over," the strategy declares. Global leadership, once embraced with ease, is now treated as a cost to be minimised. The overriding imperative is not to elevate the international system but to lighten America's load.

Nowhere is this shift more stark than in the treatment of India. Cooperation is acknowledged but



Amitabh Mattoo

Dean and Professor,
School of
International Studies,
JNU;
and former Member
National Security
Advisory Board

is instrumental. India is framed less as a civilisational actor and more as a component in America's China calculus. The NSS states that the U.S. must "continue to improve commercial (and other) relations with India to encourage New Delhi to contribute to Indo-Pacific security, including through continued quadrilateral cooperation with... 'the Quad'." In this framing, India is not an end in itself but a means to a balance-of-power arrangement the U.S. seeks to preserve.

In 2005, India's rise was an objective; now, it is a function. This narrowing is part of a broader retreat from internationalist confidence. The so-called Trump Corollary to the Monroe Doctrine, declaring an intent to "assert and enforce" hemispheric exclusivity, speaks to a nation turning inward. The irony is difficult to miss. In 2005, when India spoke of strategic autonomy, many in Washington bristled. In 2025, when America claims an expansive and unilateral autonomy, it calls it realism.

The document's tone reinforces this inwardness. It catalogues a series of claimed diplomatic triumphs, resolving multiple global conflicts "from Cambodia and Thailand" to "Pakistan and India". These read less like diplomatic achievements and more like political assertions crafted for domestic effect. Strategy becomes performance, and performance becomes a substitute for engagement with the world's real fissures.

For India, the implications are clear. The U.S. that sought to create strategic space for India in 2005 is not the U.S. reflected in the NSS – it is preoccupied with its own vulnerabilities, identity, and hierarchy of burdens. It demands more from partners yet offers less in return. It speaks of shared interests while retreating from shared responsibilities. It calls for burden-sharing but often means burden-shifting.

This does not diminish the importance of India-U.S. cooperation. It simply changes its

foundations. India cannot rely on the assumption that Washington will invest in India's rise as a matter of strategic design. India's rise will depend on India. Partnership will endure where interests converge and remain measured where they do not. As the NSS itself insists, partners must increasingly "assume primary responsibility for their regions," a polite but unmistakable signal that U.S. support will be conditional and limited.

The path forward

The lesson of 2005 remains valuable because it reminds us of the conditions under which strategic transformations occur: confidence on both sides and a belief that the other's ascent strengthens one's own. The 2025 strategy lacks that confidence. It is shaped by grievance at past overreach, suspicion of institutions, and a preoccupation with restoring an earlier notion of American primacy.

India therefore must resist the temptation to interpret this document through the lens of earlier hopes. The era that produced the civil nuclear breakthrough was an era of widening horizons for both India and the U.S. The era that produced this strategy is one of contracting horizons for

the U.S. and expanding responsibilities for India. If India is to be a major world power in the 21st century, it will not be because any external actor wills it. It will be because India possesses the strategic confidence and material capacity to act independently within a fragmented global order.

Paradoxically, the 2025 strategy makes that reality clearer than its authors intend. By reducing the scope of American commitments, it widens the space for others. For India, the challenge is not to fill a vacuum but to craft a role suited to its scale, interests, and civilisational temperament. The assumptions of 2005 cannot return, but the aspiration that animated them is ours to pursue.



The 2025 U.S. National Security Strategy document marks a profound departure from the logic articulated in 2005. For India, the implications are clear.

GS Paper 2 : International Relations

UPSC Mains Practice Question : 2025 अमेरिकी राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति गठबंधन-आधारित नेतृत्व से लेन-देन और सशर्त साझेदारी में बदलाव का प्रतीक है। नाटो और यूरोपीय सुरक्षा वास्तुकला के भविष्य के लिए इस बदलाव के निहितार्थों की आलोचनात्मक जांच करें। (150 शब्द)

संदर्भ :

ट्रम्प प्रशासन के तहत जारी 2025 संयुक्त राज्य अमेरिका की राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति (एनएसएस), अमेरिकी शासन कला में एक निर्णायक वैचारिक और रणनीतिक बदलाव का प्रतीक है। पहले की रणनीतियों के विपरीत, जो गठबंधन-आधारित नेतृत्व और बहुपक्षीय वैश्विक शासन को बनाए रखते थे, दस्तावेज़ एक स्पष्ट आवक मोड़ को दर्शाता है – संप्रभुता, लेन-देन साझेदारी

और वैश्विक प्रबंधन पर क्षेत्रीय प्रभुत्व को प्राथमिकता देता है। जैसा कि संपादकीय में बताया गया है, इस बदलाव का यूरोप की सुरक्षा वास्तुकला, नियम-आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की स्थिरता और संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ भारत के रणनीतिक जुड़ाव पर गहरा प्रभाव पड़ता है। साथ में, इन विश्लेषणों से पता चलता है कि एक दुनिया सहकारी बहुपक्षवाद से पदानुक्रमित, सशर्त और खंडित सत्ता की राजनीति की ओर बढ़ रही है।

मुख्य तर्क और विश्लेषण

1. यूरोप की अस्तित्वगत दुविधा और रणनीतिक परित्याग

- एनएसएस यूरोप को एक रणनीतिक सहयोगी के रूप में नहीं बल्कि प्रवासन, उदार मूल्यों और सांस्कृतिक विखंडन के बोझ से दबी एक गिरती सभ्यतागत इकाई के रूप में फिर से तैयार करता है। नाटो को अब सामूहिक सुरक्षा की आधारशिला के रूप में नहीं बल्कि एक अतिविस्तारित गठबंधन के रूप में तैयार किया गया है जिससे यूरोप को धीरे-धीरे अलग होना होगा।
- यूरोप पर जोर देना "अपनी रक्षा के लिए प्राथमिक जिम्मेदारी" मानने से संभावित अमेरिकी सैन्य छंटनी का संकेत मिलता है।
- दस्तावेज़ यूरोप की सांस्कृतिक और जनसांख्यिकीय चिंताओं को आगे बढ़ाते हुए रूसी आक्रामकता को कम करता है, जो पारंपरिक खतरे की धारणा का उलटा है।
- यह यूरोप को एक चौराहे पर रखता है: एक अविश्वसनीय अमेरिका पर रणनीतिक निर्भरता जारी रखना, या स्वायत्त रक्षा और निवारक क्षमताओं के निर्माण का कठिन कार्य करना - जिसमें परमाणु आयाम भी शामिल हैं - जिसके लिए संस्थागत तत्परता कमजोर बनी हुई है।

2. अमेरिकी शक्ति में तीन क्रांतियाँ: आंतरिक, बाहरी और आर्थिक

- एनएसएस, जिसे हेरिटेज फाउंडेशन के ब्लूप्रिंट और जी-20 के पुनर्गठन जैसे प्रस्तावों के साथ पढ़ा जाता है, तीन प्रणालीगत परिवर्तनों को दर्शाता है:

आंतरिक क्रांति: घरेलू संस्कृति, जनसांख्यिकीय सामंजस्य और वैचारिक अनुरूपता को सुरक्षित किया जाता है। स्वतंत्र संस्थानों को स्थिरीकरण के बजाय बाधाओं के रूप में देखा जाता है, नागरिक स्थान को सिकुड़ते हैं और बहिष्करण के माध्यम से शासन को सामान्य करते हैं।

बाहरी क्रांति: अमेरिकी विदेश नीति पूर्वानुमानित गठबंधनों से सशर्त, लेन-देन संबंधी जुड़ाव में बदल जाती है। बहुपक्षीय संस्थानों को संप्रभुता के उल्लंघन के रूप में चित्रित किया गया है, जबकि प्रवासन को केंद्रीय सुरक्षा खतरे के रूप में बढ़ाया गया है। यह नाजुक गठबंधन पैदा करता है और संशोधनवादी शक्तियों को प्रोत्साहित करता है।

आर्थिक क्रांति: एक स्तरीय वैश्विक आर्थिक व्यवस्था की ओर कदम - कुछ नियम-निर्माताओं को विशेषाधिकार देना - समावेशी वैश्विक शासन को कमजोर करता है। मर्केटिलिज्म, रिशोरिंग और टैरिफ लीवरेज सहकारी वैश्वीकरण की जगह लेते हैं, जो विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को असमान रूप से नुकसान पहुंचाते हैं।

- इन आयामों में, "क्रूरता" एक अनपेक्षित परिणाम के रूप में नहीं बल्कि एक संरचनात्मक विशेषता के रूप में कार्य करती है - जहां असमान बोझ और प्रत्याशित कठिनाई नीति डिजाइन का अभिन्न अंग हैं।

3. भारत-अमेरिका संबंध: रणनीतिक साझेदारी से लेकर महत्वपूर्ण जुड़ाव तक

- 2005 और 2025 के बीच का अंतर स्पष्ट है। 2005 में, अमेरिका ने भारत के उदय को वैश्विक व्यवस्था के लिए आंतरिक रूप से फायदेमंद के रूप में देखा। असैन्य परमाणु समझौता साझा विकास और जिम्मेदारी में विश्वास का प्रतीक है। हालाँकि, 2025 NSS में:
- भारत को मुख्य रूप से अमेरिका-चीन प्रतिस्पर्धा के चश्मे से तैयार किया गया है।
- सहयोग सभ्यतागत या परिवर्तनकारी के बजाय साधनात्मक, सशर्त और क्षेत्र-विशिष्ट है।
- बोझ-साझाकरण तेजी से बोझ-स्थानांतरण जैसा दिखता है, क्षेत्रीय स्थिरता को कम करने की अमेरिकी इच्छा के साथ।
- यह इस बात का संकेत है कि भारत का उदय अब एक अमेरिकी रणनीतिक उद्देश्य नहीं बल्कि एक भारतीय जिम्मेदारी है। रणनीतिक स्वायत्तता, जिस पर एक बार विवाद किया गया था, अब स्पष्ट रूप से अपेक्षित है।

वैश्विक व्यवस्था के लिए निहितार्थ

एनएसएस युद्ध के बाद की उदार अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था से व्यापक वापसी का प्रतिनिधित्व करता है। बहुपक्षीय संस्थानों पर हमला करके, गोलार्द्ध विशिष्टता को बढ़ावा देकर, और पदानुक्रमित शासन को वैध बनाकर, अमेरिका एक हॉब्सियन अंतरराष्ट्रीय वातावरण को तेज करने का जोखिम उठाता है जहां शक्ति मानदंडों से अधिक है। जबकि मौजूदा वैश्विक व्यवस्था अपूर्ण और विषम है, विश्वसनीय विकल्पों के बिना इसका क्षरण अस्थिरता को बढ़ाता है, खासकर मध्यम और विकासशील शक्तियों के लिए।

निष्कर्ष

2025 अमेरिकी राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति केवल एक नीति दस्तावेज नहीं है; यह अमेरिकी शासन और वैश्विक जुड़ाव में गहरे वैचारिक परिवर्तन का प्रतिबिंब है। यूरोप के लिए, यह सुरक्षा निर्भरता के लिए एक अस्तित्वगत चुनौती पेश करता है। दुनिया के लिए, यह बहुपक्षीय मानदंडों के कमजोर होने का संकेत देता है। भारत के लिए, यह एक आवश्यक सत्य को स्पष्ट करता है: इसके उदय के बाहरी प्रायोजन को अब और नहीं माना जा सकता है।

एक खंडित और पदानुक्रमित वैश्विक व्यवस्था में, भारत का रणनीतिक भविष्य उसकी अपनी भौतिक क्षमताओं, कूटनीतिक चपलता और सभ्यतागत आत्मविश्वास पर निर्भर करेगा। विरोधाभासी रूप से, अमेरिकी प्रतिबद्धताओं को अनुबंधित करके, एनएसएस स्वायत्त अभिनेताओं के लिए रणनीतिक स्थान का विस्तार करता है। भारत के सामने चुनौती अमेरिकी नेतृत्व को बदलने की नहीं है, बल्कि इस परिवर्तन को यथार्थवाद, संयम और दीर्घकालिक रणनीतिक दृष्टि के साथ नेविगेट करने की है।